बी० ए० पार्ट–3 हिन्दी साहित्य (प्रतिष्ठा)

डॉ० आशा कुमारी

अतिथि व्याख्याता

हिन्दी विभाग

मगध महिला कॉलेज, पटना

मोबाइल नम्बर–9304098602,7004661162

Email _ ashakumari2500@Gmail.com.

प्रेमचन्दः संक्षिप्त परिचय

हिन्दी उपन्यासकारों में मुंशी प्रेमचंद सबकी दृष्टि को अनायास अपनी ओर आकर्षित कर लेने वाले प्रकाश स्तंभ के रूप में हमारे सामने आते हैं अपने चारो ओर के समाज से विभिन्न कथानकों का चयन करके उन्होंने जिन विविध कहानियों व उपन्यासों की रचना की है, वह युग–युग हिंदी साहित्य की अमर निधि रहेंगे। वस्तुतः वह सच्चे अर्थो में 'कलम के सिपाही' थे। उनका पालन–पोषण किसी समृद्ध वातावरण में नहीं हुआ। अभावों में पलते हुए उन्होंने जीवन के विविध संघर्षो पर विजय प्राप्त की और निःस्वार्थ भाव से साहित्य–साधना में लीन रहे। धन के आकर्षण की ओर कभी ललायित न थे। उनका संपूर्ण व्यक्तित्व एक कर्मठ एव साहसी जीवन का परिचायक था।

उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद का जन्म **31 जुलाई 1880 ई०** को उत्तरप्रदेश में बनारस के समीप लमही नामक ग्राम में हुआ था। उनका बचपन का नाम धनपतराय था। इनके पिता अजायबराय गाँव में खेती किया करते थे किन्तु जब उससे परिवार का निर्वाह कर पाना कठिन हो गया। प्रेमचंद जब आठ वर्ष के थे, तब उनकी माता श्रीमती आनंदी देवी का भी स्वर्गवास हो गया। इस प्रकार प्रेमचंद बाल्यावस्था में ही माता के वात्साल्य से वंचित हो गए। पाँच वर्ष की अवस्था में प्रेमचंद ने एक मौलवी से उर्दू पढ़ना प्रारम्भ किया। गरीबी और पिता की स्थान–स्थान पर बदली होने से उनकी शिक्षा सुचारू रूप से नहीं हो सकी। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि पैसों की दिक्कत तो मुझे हमेशा रहती थी। बारह आना महीना फीस लगती थी। उन बारह आनों में से एक–आध आना हर महीने खा जाता था। जिस स्कूल में था, उसमें छोटी जाति के लोग थे। वह लोग मुझसे लेकर दो–चार पैसे खा लेते थे, इसलिए फीस देने में बड़ी दिक्कत होती थी।

बारह वर्ष की आयु होते–होते प्रेमचन्द उर्दू के उपन्यासों को पढ़ने में तल्लीन हो गए और तंबाकू के एक व्यापारी के लड़के के साथ बैठकर वह घंटों तक 'तिलस्म होशरूबा' की मनोरंजक कथा पढ़ने लगे।

निर्धनता की चिंता न करके उन्होंने 1895 ई० में बनारस में हाई–स्कूल की पढ़ाई ग्रहण करनी शुरू की। स्कूल में उनकी फीस माफ कर दी गई। वह सवेरे लमही से बनारस तक पैदल आते और स्कूल पढ़ते, शाम को एक लड़के को ट्यूशन पढ़ातें तथा रात लम्ही चले जाते थे। इस प्रकार, संघर्ष

करते हुए उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा भी द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण कर ली। कुछ दिनों बाद वे इन्टरमीडिएट और बी• ए• की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण कर लीं।

पारिवारिक दृष्टि से भी प्रेमचंद की स्थिति विशेष अच्छी नहीं थी। उनकी तीन बहने थी। उनमें से दो का देहांत हो गया। उनकी माँ प्रायः रोगग्रस्त रहती थी, आठ वर्ष की अवस्था में ही माता का देंहात हो गया। पिता ने दूसरा विवाह कर लिया, किंतु सौतेली माँ उन्हें अपना –सा व्यवहार देने में असमर्थ थी।

प्रेमचन्द का विवाह पंद्रह वर्ष में हुआ। उनकी बाल्यावस्था तो निर्धनता और संघर्षो में बीती थी। वैवाहिक जीवन भी दुखद रहा। वस्तुतः उनके विवाह के लिए सौतेली माँ के पिता ने लड़की पसंद की थी। प्रेमचंद तथा उनके पिता ने लड़की को नहीं देखा था। विवाह हो जाने के बाद जब उसे घर लाया गया तो प्रेमचंद तथा उनके पिता ने लड़की को नहीं देखा था। विवाह हो जाने के बाद जब उसे घर लाया गया तो प्रेमचंद को वस्तुस्थिति का ज्ञान हुआ–''जब हम ऊँट–गाड़ी से उतरे तो मेरी स्त्री ने मेरा हाथ पकड़ कर चलना शुरू किया। मैं उनकी सूरत देखी तो मेरा खून सूख गया।''

सन् 1905 ई० में उन्होंने सामाजिक रूढ़ियों की चिंता न करके अपनी चाची तथा अन्य सम्बन्धियों के विरोध को सहते हुए भी एक विज्ञापन के आधार पर बाल–विधवा युवती श्रीमती शिवरानी देवी से विवाह कर लिया। शिवरानी के साथ उनका दाम्पत्य जीवन आनंदपूर्वक बीता। वह स्वयं विदुषी थीं, आगे चलकर एक सफल कहानी लेखिका भी बनीं।

सन्1896 ई० में प्रेमचंद के जीवन में पुनः परिवर्तन आया। सन्1899 ई० में प्राइमरी स्कूल में अठारह रूपये मासिक वेतन पर उन्हें अध्यापक नियुक्त किया गया और कुछ वर्ष पश्चात् सन्1908 ई० में वह जिला हमीरपुर के अंतर्गत महोबा में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सब–इंसपैक्टर बन गए। इंसपैक्टर के रूप में उन्हें तमाम जगहों दौर करने पड़ते थे, किंतु स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण उनके लिए अधिक घूमना–फिरना संभव न रहा और इसी कारण सन्1915 ई० में उन्होंने बस्ती जिले के सरकारी विद्यालय में अध्यापक की वृत्ति पुनः स्वीकार की। अनेक वर्षो की नौकरी से यह बात स्पष्ट हो चुकी थी कि सरकारी सेवा में रहते हुए वह निर्भिकतापूर्वक अपने राष्ट्रीय विचारों को व्यक्त करने में असमर्थ थे। अतः सन् 1921ई० में सरकारी नौकरी से त्याग–पत्र देकर काशी विद्यापीठ के विद्यालय में मुख्याध्यापक बनना स्वीकार कर लिया, किंतु एक वर्ष पश्चात् उसे भी छोड़कर वह पुनः अपने लमही में लौट आए।

सन् 1924ई० में अलवर नरेश ने अन्य सुविधाओं के साथ–साथ चार सौ रूपये मासिक पर उन्हें अपने राजमहल में आमंत्रित किया, साथ ही प्रेमचंद के यश को देखकर ब्रिटिश सरकार ने उन्हें 'रायसाहब' की पदवी देनी चाही थी, आदर्शवादी एवं निर्भिक लेखक प्रेमचंद ने उसे भी नहीं स्वीकारा। ब्रिटिश सरकार प्रेमचंद की निर्भिक विचारधारा की लोकप्रियता रोकना चाहती थी और इसी कारण उनके कहानी 'सोजे–वतन' की सभी प्रतियाँ जला दी गई। किंतु प्रेमचन्द ने हार नहीं मानी और जब यह अनुभव किया कि सरकारी नौकरी और राष्ट्रीय विचारों की अभिव्यक्ति साथ–साथ नहीं चल सकती तब वे नौकरी छोड़ दी और छोटी–सी प्रेस की स्थापना करके 'जागरण' तथा 'हंस' नामक दो पत्रिकाओं का संपादन प्रारंभ किया। सन् 1934 ई० में मुम्बई की एक फिल्म कंपनी के आमंत्रण पर वह आठ हजार रूपये वार्षिक का अनुबंध करके वहाँ चले गए। फिल्मों में लिखी जाने वाली कहानियों की विचारधारा से असहमत होने के कारण एक वर्ष पश्चात् वहाँ से भी लमही लौट आए और इसके पश्चात् वे कहीं नौकरी नहीं की।

प्रेमचन्द मानवतावादी विचारधारा के समर्थक थे। उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, बाल–साहित्य, जीवनी तथा 'हंस' एवं 'जागरण' पत्रिकाओं के संपादकीय रूप में लिखी गई असंख्य टिप्पणियों एवं लेखों के माध्यम से हिंदी को अपने विविध विचार प्रदान किए हैं। इनमें से उनका उपन्यासकार, कहानीकार तथा समालोचक का रूप तो अधिक प्रबल रहा है। उपन्यासकार के क्षेत्र में उन्होंने हिंदी–साहित्य को निम्नलिखित अत्यंत लोकप्रिय एवं प्रभावशाली उपन्यास प्रदान किए है, जिनमें से अनेक के उर्दू संस्करण भी उपलब्ध हैं–

(1) प्रेमा (उर्दू में 'हम–खुमा–ओ–हम–सवाब')(2) सेवासदन (उर्दू में 'बाजारे–हुस्न') (3) वरदान (उर्दू में 'जलवा–ए–ईसार') (4) प्रेमाश्रम उर्दू में ('गोशा–ए–आकीयत')(5) कायाकल्प(उर्दू में 'पर्दा–ए–मजाज')(6) निर्मला (7)प्रतिज्ञा (उर्दू में'वेवाह') (8)गबन(9)कर्मभूमि (उर्दू में 'मैदान–अमल')(10) गोदान(11) मंगलसूत्र (अपूर्ण)

कहानीकार के रूप में प्रेमचंद 'मानसरोवर' के आठ भागों में संकलित लगभग तीन सौ कहानियों द्वारा हिंदी–कथा साहित्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। समालोचन तथा समायिक विषयों के चिंतन की दृष्टि से भी उन्होंने असंख्य लेख लिख थे। पत्रिकाओं में फुटकर रूप में बिखरे होने के कारण हिंदी के अधिकांश पाठक प्रेमचंद के इस रूप से अपरिचित थे

सन् 1936 ई० के जून मास में प्रेमचंद के पेट में अचानक पीड़ा होने लगी और खून की उल्टी आई। धीरे–धीरे वह दुर्बल होते गए, किंतु साहित्य साधना से विचलित नहीं हुए और इसी अवस्था में गोर्की की मृत्यु पर आयोजित शोक–सभा में भाषण दिया तथा अपने उपन्यास 'मंगलसूत्र'की रचना प्रारंभ की। अक्टूबर माह में वह इतने दुर्बल हो गए कि उन्हें कभी–कभी मूर्च्छा भी आने लगी। मृत्यु से एक दिन पूर्व रोगशय्या पर लेटे लेटे उन्होंने जैनेन्द्र से साहित्यिक गतिविधियों के विषय में विचार विमर्श किया। यह उनके जीवन की अंतिम साहित्यक चर्चा थी। और इस प्रकार जीवन और जगत से संघर्ष करते हुए मानवीय विचारधारा के संपोषक, शोषित तथा उपेक्षित जन–समूह का प्रतिनिधित्व करने वाले हिंदी के अन्नय साहित्य सेवी उपन्यासकार सम्राट मुंशी प्रेमचंद जी 8 अक्टूबर 1936 ई० को इस नश्वर संसार से विदा लेकर साहित्यावकाश में सदैव के लिए अमर हो गए।

इस प्रकार, प्रेमचन्द का जीवन संघर्षो और अभावों की कहानी है। नौकरी का स्थायित्व उन्हें कभी नहीं मिल सका, फिर भी वह कभी निराश नहीं हुए। उनका जीवन सरल और सात्विक था जो मिला वे उसी में संतुष्ट रहते थे तथा वे निरंतर साहित्य–साधना में लीन रहें। वस्तुतः महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने कविवर निराला की मृत्यु पर जो उद्‌गार व्यक्त किया था। वहीं उद्‌गार यहाँ भी उद्धत की जा सकती है–''आने वाली पीढ़ियाँ इस महान कलाकार की प्रतिभा के बारे में कितनी ही कल्पनाएँ करेंगी, किंतु वह उसके सरल, निष्कपट, उदार जीवन की झाँकी कहाँ पा सकेंगी? उनकी साहित्य–प्रतिभा की भाँति उनकी महामानवता भी साधारण मानदंड के माप से बाहर की चीज है।''